International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Volume-6, Issue-2, March-April - 2019
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

महात्मा बुद्ध का जीवन परिचय एवं उनके वैचारिक भाव

हेवेन्द्र कुमार शर्मा
शोधार्थी
सी.एम.जे. विश्वविद्यालय
जोराबट, मेघालय।

डा0 मो0 मेराज आलम नहल
शोध निर्देशिक
सी.एम.जे. विश्वविद्यालय
जोराबट, मेघालय।

महापुरुषों की कीर्ति किसी एक युग तक सीमित नहीं रहती। उनका लोकहितकारी चिन्तन एवं कर्म कालजयी, सार्वभौमिक, सार्वकालिक एवं सार्वदैशिक होता है और युग–युगों तक समाज का मार्गदर्शन करता है। गौतम बुद्ध हमारे ऐसे ही एक प्रकाशस्तंभ हैं, बुद्ध पूर्णिमा को उनकी जयंती मनाई जाती है और उनका निर्वाण दिवस भी बुद्ध पूर्णिमा के दिन ही हुआ था। यानी यही वह दिन था जब बुद्ध ने जन्म लिया, शरीर का त्याग किया था और मोक्ष प्राप्त किया। बुद्ध पूर्णिमा न केवल बौध धर्म के अनुयायियों के लिए बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के लिये एक महत्वपूर्ण दिन है। उनको सबसे महत्वपूर्ण भारतीय आध्यात्मिक महामनीषी, सिद्ध–संन्यासी, समाज–सुधारक धर्मगुरु में से एक माना जाता हैं। उन्होंने न केवल अनेक प्रभावी व्यक्तियों बल्कि आम जन के हृदय को छुआ और उनके जीवन में सकारात्मक बदलाव लाए। उन्हें धर्मक्रांति के साथ–साथ व्यक्ति एवं विचारक्रांति के सूत्रधार भी कह सकते हैं। उनकी क्रांतिवाणी उनके क्रांत व्यक्तित्व की अतोतक ही नहीं वरन् धार्मिक, सामाजिक विकृतियों एवं अंधरूढ़ियों पर तीव्र कटाक्ष एवं परिवर्तन की प्रेरणा भी है, जिसने असंख्य मनुष्यों की जीवन दिशा को बदला। भगवान बुद्ध को भगवान विष्णु का 9वां अवतार माना जाता है, इस दृष्टि से हिन्दू धर्मावलम्बियों के लिये भी उनका महत्व है।

1.1 जीवन परिचय

563 ईसा पूर्व वैशाख मास की पूर्णिमा को लुम्बनी वन में शाल के दो वृक्षों के बीच एक राजकुमार ने उस समय जन्म लिया, जब उनकी मां कपिलवस्तु की महारानी महामाया देवी अपने पीहर देवदह जा रही थी और रास्ते में ही उन्हें प्रसव पीड़ा शुरू हो गई थी। इस राजकुमार का नाम रखा गया सिद्धार्थ, जो आगे चल कर महात्मा बुद्ध के नाम से विख्यात हुए। महात्मा बुद्ध का जीवन दर्शन और उनके विचार आज ढाई हजार से अधिक वर्षों के बेहद लंबे अंतराल बाद भी उतने ही प्रासंगिक हैं। उनके प्रेरणादायक जीवन दर्शन का जनजीवन पर अमिट प्रभाव रहा है। हिन्दू धर्म में जो अमूल्य स्थान चार वेदों का है, वही स्थान बौद्ध धर्म में 'पिटकों' का है। महात्मा बुद्ध स्वयं अपने हाथ से कुछ नहीं लिखते थे बल्कि उनके शिष्यों ने ही उनके उपदेशों को कंठस्थ कर बाद में उन्हें लिखा और लिखकर उन उपदेशों को वे पेटियों में रखते जाते थे, इसीलिए इनका नाम 'पिटक' पड़ा, जो तीन प्रकार के हैं–विनय पिटक, सुत्त पिटक तथा अभिधम्म पिटक।

महात्मा बुद्ध के जीवनकाल की अनेक घटनाएं ऐसी हैं, जिनसे उनके मन में समस्त प्राणीजगत के प्रति निहित कल्याण की भावना तथा प्राणीमात्र के प्रति दयाभाव का साक्षात्कार होता है। उनके हृदय में बाल्यकाल से ही चराचर जगत में विअतमान प्रत्येक प्राणी में प्रति करूणा कूट–कूटकर भरी थी। मनुष्य हो या कोई जीव–जन्तु, किसी का भी दुख उनसे देखा नहीं जाता था। एक बार की बात है, जंगल में भ्रमण करते समय उन्हें किसी शिकारी के तीर से घायल एक हंस मिला। उन्होंने उसके शरीर से तीर निकालकर उसे थोड़ा पानी पिलाया। तभी उनका चचेरा भाई देवदत्त वहां आ पहुंचा और कहा कि यह मेरा शिकार है, इसे मुझे सौंप दो। इस पर राजकुमार सिद्धार्थ ने कहा कि इसे मैंने बचाया है जबकि तुम तो इसकी हत्या कर रहे थे, इसलिए तुम्हीं बताओ कि इस पर मारने वाले का अधिकार होना चाहिए या बचाने वाले का। देवदत्त ने सिद्धार्थ की शिकायत उनके पिता राजा शुद्धोधन से की। शुद्धोधन ने सिद्धार्थ से कहा कि तीर तो देवदत्त ने ही चलाया था, इसलिए तुम यह हंस उसे क्यों नहीं दे देते?

इस पर सिद्धार्थ ने तर्क दिया, ''पिताजी! इस निरीह हंस ने भला देवदत्त का क्या बिगाड़ा था? उसे आसमान में स्वच्छंद उड़ान भरते इस बेकसूर हंस पर तीर चलाने का क्या अधिकार है? उसने इस हंस पर तीर चलाकर इसे घायल किया ही क्यों? मुझसे इसका दुख देखा नहीं गया और मैंने तीर निकाल कर इसके प्राण बचाए हैं, इसलिए इस हंस पर मेरा ही अधिकार होना चाहिए।'' राजा शुद्धोधन सिद्धार्थ के इस तर्क से सहमत होते हुए बोले, ''तुम बिल्कुल सही कह रहे हो सिद्धार्थ। मारने वाले से बचाने वाला ही बड़ा होता है, इसलिए इस हंस पर तुम्हारा ही अधिकार है।''

संन्यासी बनकर गौतम बुद्ध ने अपने आप को आत्मा और परमात्मा के निरर्थक विवादों में फँसाने की अपेक्षा समाज कल्याण की ओर अधिक ध्यान दिया। उनके उपदेश मानव को दुःख एवं पीड़ा से मुक्ति के माध्यम बने, साथ–ही–साथ सामाजिक एवं सांसारिक समस्याओं के समाधान के प्रेरक बने, जो जीवन को सुन्दर बनाने एवं मानवीय मूल्यों को लोकचित्त में संचरित करने में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। यही कारण है कि उनकी बात लोगों की समझ में सहज रूप से ही आने लगी। महात्मा बुद्ध ने मध्यममार्ग अपनाते हुए अहिंसा युक्त दस शीलों का प्रचार किया तो लोगों ने उनकी बातों से स्वयं को सहज ही जुड़ा हुआ पाया। उनका मानना था कि मनुष्य यदि अपनी तृष्णाओं पर विजय प्राप्त कर ले तो वह निर्वाण प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार उन्होंने पुरोहितवाद पर करारा प्रहार किया और व्यक्ति के महत्त्व को प्रतिष्ठित किया।

महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म का प्रवर्तन किया और अत्यन्त कुशलता से बौद्ध भिक्षुओं को संगठित किया और लोकतांत्रिक रूप में उनमें एकता की भावना का विकास किया। इनका अहिंसा एवं करुणा का सिद्धांत इतना लुभावना था कि सम्राट अशोक ने दो वर्ष बाद इससे प्रभावित होकर बौद्ध मत को स्वीकार किया और युद्धों पर रोक लगा दी। इस प्रकार बौद्ध मत देश की सीमाएँ लांघ कर विश्व के कोने–कोने तक अपनी ज्योति फैलाने लगा। आज भी इस धर्म की मानवतावादी, बुद्धिवादी और जनवादी परिकल्पनाओं को नकारा नहीं जा सकता और इनके माध्यम से भेद भावों से भरी व्यवस्था पर जोरदार प्रहार किया जा सकता है। यही धर्म

आज भी दुःखी, पीड़ित एवं अशान्त मानवता को शान्ति प्रदान कर सकता है। ऊँच–नीच, भेदभाव, जातिवाद पर प्रहार करते हुए यह लोगों के मन में धार्मिक एकता का विकास कर रहा है। विश्व शान्ति एवं परस्पर भाईचारे का वातावरण निर्मित करके कला, साहित्य और संस्कृति के विकास के मार्ग को प्रशस्त करने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

वास्तव में देखा जाए तो राज–शासन और धर्म–शासन दोनों का ही मुख्य उद्देश्य जनता को सन्मार्ग पर ले जाना है। परन्तु राज–शासन के अधिनायक स्वयं मोहमाया ग्रस्त प्राणी होते हैं, अतः वे समाज सुधार के कार्य में पूर्णतया सफल नहीं हो पाते। भला, जो जिस चीज को अपने हृदयतल में से नहीं मिटा सकता, वह दूसरे हजारों हृदयों से उसे कैसे मिटा सकता है? राज–शासन की आधारशिला प्रेम, स्नेह एवं सद्भाव की भूमि पर नहीं रखी जाती है, वह रखी जाती है, प्रायः भय, आतंक और दमन की नींव पर। यही कारण है कि राज–शासन प्रजा में न्याय, नीति और शांति की रक्षा करता हुआ भी अधिक स्थायी व्यवस्था कायम नहीं कर सकता। जबकि धर्म–शासन परस्पर के प्रेम और सद्भाव पर कायम होता है, फलतः वह सत्य–पथ प्रदर्शन के द्वारा मूलतः समाज का हृदय परिवर्तन करता है और सब ओर से पापाचार को हटाकर स्थायी न्याय, नीति तथा शांति की स्थापना करता है।

1.2 महात्मा बुद्ध की शिक्षा

मनुष्य जिन दुखोंसे पीड़ित है, उनमें बहुत बड़ा हिस्सा ऐसे दुखों का है, जिन्हें मनुष्य ने अपने अज्ञान, गलत ज्ञान या मिथ्या दृष्टियों से पैदा कर लिया हैं उन दुखोंका प्रहाण अपने सही ज्ञान द्वारा ही सम्भव है, किसी के आशीर्वाद या वरदान से उन्हें दूर नहीं किया जा सकता। सत्य या यथार्थता का ज्ञान ही सम्यक ज्ञान है। अतरू सत्य की खोज दुख मोक्ष के लिए परमावश्यक है। खोज अज्ञात सत्य की ही की जा सकती है। यदि सत्य किसी शास्त्र, आगम या उपदेशक द्वारा ज्ञात हो गया है तो उसकी खोज नहीं। अत बुद्ध ने अपने पूर्ववर्ती लोगों द्वारा या परम्परा द्वारा बताए सत्य को नकार दिया और अपने लिए नए सिरे से उसकी खोज की। बुद्ध स्वयं कहीं प्रतिबद्ध नहीं हुए और न तो अपने शिष्यों को उन्होंने कहीं बांधा। उन्होंने कहा कि मेरी बात को भी इसलिए चुपचाप न मान लो कि उसे बुद्ध ने कही है। उस पर भी सन्देह करो और विविध परीक्षाओं द्वारा उसकी परीक्षा करो। जीवन की कसौटी पर उन्हें परखो, अपने अनुभवों से मिलान करो, यदि तुम्हें सही जान पड़े तो स्वीकार करो, अन्यथा छोड़ दो। यही कारण था कि उनका धर्म रहस्याडम्बरों से मुक्त, मानवीय संवेदनाओं से ओतप्रोत एवं हृदय को सीधे स्पर्श करता था।

1.3 बुद्ध की शिक्षा की सार्वभौमिकता

भाषा : महात्मा बुद्ध ने किस भाषा में उपदेश दिए, इसे जानने के लिए हमारे पास पुष्कल प्रामाणिक सामग्री का अभाव है, फिर भी इतना निश्चित है कि उनके उपदेशों की भाषा कोई लोकभाषा ही थी। इसके अनेक कारण हैं।

पहला यह कि वह अपना सन्देश जन–जन तक पहुँचाना चाहते थे, न कि विशिष्ट जनों तक ही। इसके लिए आवश्यक था कि वे जनभाषा में ही उपदेश देते।

दूसरा यह कि भाषा विशेष की पवित्रता पर उनका विश्वास न था। वे यह नहीं मानते थे कि शुद्ध भाषा के उच्चारण से पुण्य होता है। बुद्ध ने कहा कि मैं अपनी–अपनी भाषा में उन्हें संग्रहीत करने की अनुमति प्रदान करता हूँ–अनुजानामि भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया बुद्धवचनं परियापुणितुं तिख। फलत उनके उपदेश पैशाची, संस्कृत, अपभ्रंश, मागधी आदि अनेक भाषाओं में संकलित हुए।

मानव–समता : महात्मा बुद्ध के अनुसार धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्र में सभी स्त्री एवं पुरुषों में समान योग्यता एवं अधिकार हैं। इतना ही नहीं, शिक्षा, चिकित्सा और आजीविका के क्षेत्र में भी वे समानता के पक्षधर थे। उनके अनुसार एक मानव का दूसरे मानव के साथ व्यवहार मानवता के आधार पर होना चाहिए, न कि जाति, वर्ण, लिङ्ग आदि के आधार पर। क्योंकि सभी प्राणी समानरूप से दुखी हैं, अत सब समान हैं। दुख प्रहाण ही उनके धर्म का प्रयोजन है। अत संवेदना और सहानुभूति ही इस समता के आधारभूत तत्त्व हैं। उन्होंने कहा कि जैसे सभी नदियाँ समुद्र में मिलकर अपना नाम, रूप और विशेषताएं खो देती हैं, उसी प्रकार मानवमात्र उनके संघ में प्रविष्ट होकर जाति, वर्ण आदि विशेषताओं को खो देते हैं और समान हो जाते हैं। निर्वाण ही उनके धर्म का एकमात्र रस है।

मानव श्रेष्ठता : महात्मा बुद्ध के अनुसार मानव जन्म अत्यन्त दुर्लभ है। मनुष्य में वह बीज निहित है, जिसकी वजह से यदि वह चाहे तो अभ्युदय एवं श्रेयस अर्थात् निर्वाण और बुद्धत्व जैसे परम पुरुषार्थ भी सिद्ध कर सकता है। देवता श्रेष्ठ नहीं हैं, क्योंकि वे व्यापक तृष्णा के क्षेत्र के बाहर नहीं हैं। अत मनुष्य उनका दास नहीं है, अपितु उनके उद्धार का भार भी मनुष्य के ऊपर ही हैं। इसीलिए उन्होंने कहा कि भिक्षुओं, बहुजन के हित और सुख के लिए तथा देव और मनुष्यों के कल्याण के लिए लोक में विचरण करो। ऋषिपतन मृगदाव (सारनाथ) में अपने प्रथम वर्षावास के अनन्तर भिक्षुओं को उनका यह उपदेश मानवीय स्वतन्त्रता और मानवश्रेष्ठता का अप्रतिम उद्‌घोष है।

व्यावहारिकता : महात्मा बुद्ध की शिक्षा अत्यन्त व्यावहारिक थी। उसमें किसी भी तरह के रहस्यों और आडम्बरों के लिए कोई स्थान न थां उनका चिन्तन प्राणियों के व्यापक दुखोंके कारण की खोज से प्रारम्भ होता है, न कि किसी अत्यन्त निगूढ, गुहाप्रविष्ट तत्त्व की खोज से। वे यावज्जीवन दुखों के अत्यन्त निरोध का उपाय ही बताते रहे। उन्होंने ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने से इन्कार कर दिया और उन्हें अव्याकरणीय (अव्याख्येय) करार दिया, जिनके द्वारा यह पूछा जाता था कि यह लोक शाश्वत है कि अशाश्वतय यह लोक अनन्त है कि सान्त अथवा तथागत मरण के पश्चात् होते हैं या नहीं–इत्यादि। उनका कहना था कि ऐसे प्रश्न और उनका उत्तर न अर्थसंहित है और न धर्मसंहित।

मध्यमा प्रतिपदा : महात्मा बुद्ध ने जिस धर्मचक्र का प्रवर्तन किया अथवा जिस मार्ग का उन्होंने उपदेश किया, उसे मध्यमा प्रतिपदा कहा जाता है। परस्पर–विरोधी दो अन्तों या अतियों का निषेध कर भगवान ने मध्यम मार्ग प्रकाशित किया है। मनुष्य का स्वभाव है कि वह बड़ी आसानी से किसी अन्त में पतित हो जाता है और उस अन्त को अपना पक्ष बनाकर उसके प्रति आग्रहशील हो जाता है। यह आग्रहशीलता ही सारे मानवीय विभेदों, संघर्षों और दुखों का मूल है। मध्यमा प्रतिपद् अनाग्रहशीलता है और समस्याओं से मुक्ति का सर्वोत्तम राजपथ हैं इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है और इसमें अनन्त सम्भावनाएं निहित है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं के समाधान में भी इसकी उपयोगिता सम्भावित हैं, किन्तु अभी तक उन दिशाओं में इसका अध्ययन और प्रयोग नहीं किया जा सका। शील, समाधि और प्रज्ञा या दर्शन के क्षेत्र में ही उसकी प्राचीन व्याख्याएं उपलब्ध होती हैं। लीनता और उद्धव (औद्धत्व) ये दोनों दोष हैं, जो समाधि के बाधक हैं। समाधि चित्त का समप्रवाह है। यह समाधि की दृष्टि से मध्यमप्रतिपदा है। प्रज्ञा की दृष्टि से शाशवतवाद (नित्यता के प्रति आग्रह) एक अन्त है और उच्छेदवाद (ऐहिकवाद) दूसरा अन्त है। इन दोनों अन्तों का निरास मध्यमा प्रतिपद् है। यही सम्यग् दृष्टि है। इसके बिना अभ्युदय और निरूश्रेयस कोई भी पुरुषार्थ सिद्ध नहीं किया जा सकता। सभी बौद्ध दार्शनिक मध्यम–प्रतिपदा स्वीकार करते हैं, किन्तु वे शाश्वत और उच्छेद अन्त की भिन्न–भिन्न व्याख्याएं करते हैं।

प्रतीत्यसमुत्पाद : प्रतीत्यसमुत्पाद सारे बुद्ध विचारों की रीढ़ है। बुद्ध पूर्णिमा की रात्रि में इसी के अनुलोम–प्रतिलोम अवगाहन से बुद्ध ने बुद्धत्व का अधिगत किया। प्रतीत्यसमुत्पाद का ज्ञान ही बोधि है। यही प्रज्ञाभूमि है। अनेक गुणों के विअतमान होते हुए भी आचार्यों ने बड़ी श्रद्धा और भक्तिभाव से ऐसे भगवान बुद्ध का स्तवन किया है, जिन्होंने अनुपम और अनुत्तर प्रतीत्यसमुत्पाद की देशना की है। चार आर्यसत्य, अनित्यता, दुखता, अनात्मता क्षणभङ्गवाद, अनात्मवाद, अनीश्वरवाद आदि बौद्धों के प्रसिद्ध दार्शनिक सिद्धान्त इसी प्रतीत्यसमुत्पाद के प्रतिफलन हैं।

कर्मस्वातन्त्र्य : बौद्धों का कर्म–सिद्धान्त भारतीय परम्परा में ही नहीं, अपितु विश्व की धार्मिक परम्परा में बेजोड़ एवं सबसे भिन्न है। प्राय सभी लोग कर्म को जड़ मानते हैं, अतरू कर्मों के कर्ता को उन कर्मों के फल से अन्वित करने के लिए एक अतिरिक्त चेतन या ईश्वर के अस्तित्व की आवश्यकता महसूस करते हैं। उनके अनुसार ऐसे अतिरिक्त चेतन के अभाव में कर्म–कर्मफल व्यवस्था बन नहीं सकेगी और सारी व्यवस्था अस्त व्यस्त हो जाएगी। जबकि बौद्ध लोग कर्म को जड़ ही नहीं मानते। भगवान बुद्ध ने कर्म को चेतना कहा है, कर्म क्योंकि चेतना है, अत वह अपने फल को स्वयं अंगीकार या आकृष्ट कर लेती है। चेतना–प्रवाह में कर्म–कर्मफल की सारी व्यवस्था सुचारुता सम्पन्न हो जाती है। इसलिए फल देने के लिए एक अतिरिक्त चेतन या ईश्वर को मानने की उन्हें कतई आवश्यकता नहीं हैं इसीलिए विश्व के सारे आध्यात्मिक धर्मों के बीच में बौद्ध एकमात्र अनीश्वरवादियों में प्रमुख हैं।

1.4 बौद्ध धर्म का उदय और प्रसार

जैन धर्म के विपरीत, यह धर्म जंगली आग की तरह दूर–दूर तक फैल गया क्योंकि इसने ब्राह्मणवादी संस्कारों और अनुष्ठानों के साथ समाज को राहत दी। इसके प्रसार के पीछे विभिन्न कारकों ने काम किया।

नालंदा, पुष्पागिरि, विक्रमशिला, रत्नागिरी, ओदंतपुरी और सोमपुरी में प्रसिद्ध विश्वविद्यालयों ने अप्रत्यक्ष रूप से बौद्ध धर्म के प्रसार में मदद की। इन विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले बड़ी संख्या में छात्रों ने बौद्ध धर्म से प्रभावित होकर इसे अपनाया। उन्होंने बुद्ध के संदेशों को दूर–दूर तक फैलाया। प्रसिद्ध चीनी तीर्थयात्री ह्वेन त्सांग नालंदा विश्वविद्यालय के छात्र थे। नालंदा में शिलावद्र, धर्मपाल और दिवाकरमित्र जैसे कई प्रसिद्ध शिक्षक थे जिन्होंने बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए अपना जीवन समर्पित किया।

बौद्ध परिषद : बौद्ध धर्म के प्रसार के लिए बौद्ध परिषदों में अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। बुद्ध की मृत्यु के कुछ समय बाद, धमतमा (धार्मिक सिद्धांत) और विकाया (संन्यासी संहिता) संकलित करने के लिए अजातशत्रु के तत्वावधान में राजगृह के पास सटापोनी गुफा में 487 ईसा पूर्व में पहली बौद्ध परिषद का आयोजन किया गया था।

अध्यक्षता भिक्षुक महाकश्यप ने की। लगभग 500 भिक्षुओं ने परिषद में भाग लिया और बुद्ध की शिक्षाओं को दो पिटकों–सुत्त पिटक और विनय पिटक में संकलित किया। ये दो पित्ताकाश पाली में लिखे गए थे। बुद्ध के दो प्रसिद्ध शिष्य, अर्थात उपाली और महात्मा बुद्ध की मृत्यु के ठीक एक सौ साल बाद 387 ईसा पूर्व में दूसरी बौद्ध परिषद वैशाली में आयोजित की गई थी क्योंकि अनुशासन संहिता के बारे में एक विवाद विकसित हो गया था क्योंकि वैशाली और पाटलिपुत्र के भिक्षुओं ने भविष्य में उपयोग के लिए नमक का भंडारण करने, भोजन लेने जैसे दस नियमों का पालन करना शुरू कर दिया था। मध्याह्न के बाद, ओवर–ईटिंग, ताड़ का रस पीना, सोना और चांदी आदि को स्वीकार करना, जो कौशांबी और अवंती के भिक्षुओं द्वारा विरोध किया गया था।

बौद्ध धर्म की गिरावट : भारत में बौद्ध धर्म बारहवीं शताब्दी तक बन गया। भारत में बौद्ध धर्म के पतन के लिए कई कारक जिम्मेदार थे।

बौद्ध संघों की गिरावट : बौद्ध धर्म के पतन और पतन का महत्वपूर्ण कारण बौद्ध संघों का पतन था। संघ भ्रष्टाचार का केंद्र बन गया। विनय पिटक के अनुशासन का उल्लंघन किया गया। विहारों में सहज–सरल लोगों का वर्चस्व था। भिक्षुओं और ननों ने आनंद और सहजता से जीवन जीना शुरू किया। महाअनिस्ट और हिनायनवादी आपस में झगड़ पड़े। आंतरिक संघर्ष बौद्ध धर्म की बर्बादी साबित हुआ।

1.5 बौद्ध दर्शन के शैक्षिक निहितार्थ

बौद्ध दर्शन : बौद्ध धर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध माने जाते हैं। गौतम बुद्ध का मूल नाम सिद्धार्थ था। इनका

गोत्र गौतम था अतः वे गौतम कहलाए। बुद्धत्व को प्राप्त करने के उपरांत इन्हें बुद्ध कहा जाने लगा। बुद्धत्व प्राप्त करने के बाद गौतम बुद्ध ने करीब 40 वर्ष तक धर्म प्रचार का कार्य किया।

महात्मा बुद्ध के समय जो धर्म प्रचार हो रहा था उसके पीछे आधार के रूप में बुद्ध के उपदेश ही काम करते थे। बौद्ध साहित्य के मूल ग्रंथ जिनमें बौद्ध दर्शन के उद्‌गार संचित हैं जो पाली भाषा में उपलब्ध है। इन सग्रहों को सुत्त, विनय और अभिधम्म पिटक कहते हैं। यह तीनों मिलकर त्रिपिटक कहलाते हैं। महात्मा बुद्ध पहले धर्म प्रचारक हैं फिर दार्शनिक क्योंकि बुद्ध के अनुसार दार्शनिक विचार जीवन की समस्याओं के समाधान में कभी काम नहीं आते।

बौद्ध दर्शन ने शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर उल्लेखनीय विचार प्रस्तुत किए हैं। इस दर्शन के शैक्षिक निहितार्थ हो या महत्व को इस प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है।

1.6 महात्मा बुद्ध के अनमोल विचार

- कोई इंसान जैसा सोचता है, उसकी सोच जैसी होती है वह वैसा ही बना जाता है। कोई व्यक्ति बुरी सोच के साथ बोलता या काम करता है, तो उसे कष्ट ही मिलता है। यदि कोई व्यक्ति शुद्ध विचारों के साथ बोलता या काम करता है, तो उसे खुशियां मिलती हैं और ये खुशी उसकी परछाई की तरह उसका साथ कभी नहीं छोड़ती।
- महात्मा बुद्ध कहते हैं, अतीत पे ध्यान मत दो, भविष्य के बारे में मत सोचो, अपने मन को वर्तमान क्षण पर केन्द्रित करो। इसके माध्यम से बुद्ध कहना चाहते हैं कि हमें अपने आज में जीना चाहिए और उसे ही बेहतर बनाने की कोशिश करनी चाहिए क्योंकि खुश रहने का सबसे अच्छा तरीका यही है।
- दूसरों से लड़ाई करने से अच्छा है तुम खुद पर जीत हासिल करो। इससे तुम्हें कभी कोई दिक्कत नहीं आएगी और हमेशा जीत तुम्हारी ही रहेगी। अगर तुमने खुद पर जीत हासिल कर ली तो तुम्हें कोई पराजित नहीं कर सकता।
- बुद्ध कहते हैं कि तीन चीजें ज्यादा देर तक नहीं छिप सकतीं–सूर्य, चंद्रमा और सत्य। अगर आपने कोई गलती कर दी है और उसे छिपाने के लिए झूठ बोल रहे हैं तो याद रखें कि सत्य ज्यादा देर तक छिप नहीं पाएगा।
- आपके पास जो कुछ भी है उसे दूसरों के सामने बढ़ा–चढ़ा कर मत बताइए, और ना ही दूसरों से ईर्ष्या कीजिये, जो दूसरों से ईर्ष्या करता है उसे मन की शांति नहीं मिलती।

1.7 निष्कर्ष–

महात्मा बुद्ध ने बौद्ध धर्म का प्रवर्तन किया, उनका अहिंसा और करुणा का सिद्धांत इतना लुभावना था कि सम्राट अशोक ने इससे प्रभावित होकर बौद्ध मत को स्वीकार किया और युद्ध पर रोक लगा दी। उनके

उपदेश अधिकतर सामाजिक और सांसारिक समस्याओं पर केन्द्रित रहे। भले ही उन्होंने ये बातें सैकड़ों साल पहले कही हो लेकिन आज भी उनके विचार प्रासंगिक हैं और व्यक्ति के जीवन को सफल और खुशहाल बनाने में मदद कर सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- मिश्र, विजयकान्त (1961) पुरातत्व की दृष्टि मे। वैशाली : वैशाली संघ मुखर्जी, आर0के0 : भारतीय संस्कृति और कला।
- मुखर्लीपी0सी0(1896–97)रिपोर्टआनएक्सकेवेशन्सइनपाटलिपुत्रःकलकत्तामैक्समूलर (1953) स्टडीज इन बुद्धिज्म : कलकत्ता।
- मूर्ति, टी0आर0वी0 (1960) दि सेन्ट्रल फिलासफी आफ बुद्धिज्म, ए स्टडी आफ दि माध्यमिक सिस्टम : लन्दन।
- मेहता, डॉ0 मोहनलाल (1973), जैन धर्म दर्शन, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान; वाराणसी
- रिज, डेविड़स (1950) बुद्धिष्ट इण्डिया : कलकत्ता।
- राकहिल, डब्ल्यू0डब्ल्यू0 (1884) लाइफ आफ दि बुद्ध : लन्दन; (1884) ओरियटालिया इण्डिया :वाराणसी।
- राम, राजेन्द्र (1977) ए हिस्ट्री आफ बुद्धिज्म इन नेपाल : पटना।
- रीजस डेविड्स, टी0 डब्ल्यू एवं स्टडी विलियम (सं0) (1925) पालि इंग्लिश डिक्शनरी, पी0टी0एस0 : लन्दन।
- रीजस डेविड्स, टी0 डब्ल्यू (1882) लेक्चर आफ दि ओरिजिन एण्ड ग्रोथ आफ रिलिजन एज इलस्ट्रेटड बाई सम पाइण्ट्स इन दि हिस्ट्री आफ इण्डियन बुद्धिज्म; लन्दन।
- लामा, जी0के0 (2013) बुद्धिस्ट केव टेम्पल आफ एंशिएन्ट इण्डिया बुद्धिस्ट वर्ल्ड प्रेस : नई दिल्ली।
- लाहा, विमलाचरण (1943) इन्डिया एज डिस्क्राइब्ड इन अर्ली टेक्ट्स आफ बुद्धिज्म एण्ड जैनिज्म : लन्दन।
- लाहा, विमलाचरण (1927) वीमेर एण्ड बुद्धिज्म लिटरेचर : डब्ल्यू ई0 बेस्टिन एण्ड कम्पनी, कोलम्बो।
- लाहा, विमलाचरण (1968) हिस्टारिकल ज्योग्राफी आफ ऐं येण्ट इण्डिया एशियाटिक सोसायटी; पेरिस।
- लाहा, विमलाचरण (1933) हिस्ट्री आफ पालि लिटरेचर, जिल्द 1 व 2 : लन्दन।
- वर्गेस, जे0 (1963) बुद्धिस्ट केव टेम्पूल्स एण्ड देयर इन्सक्रिप्शंस : इण्डोलाजिकल बुकहाउस, वाराणसी।
- वागले, नरेन्द्र (1966) सोसायटी एट दी टाइम आफ दि बुद्ध : बम्बई। विण्टरनित्ज, एम0 (1983) ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर, जिल्द 2 : मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
- शास्त्री, अजयमित्र (1965) एन आउट लाइन आफ अर्ली बुद्धिज्म : वाराणसी। शर्मा, डॉ0 चन्धर, (1981),

बौद्ध दर्शन और वेदान्त, विजन–विभूति प्रकाशन; इलाहाबाद।

- शर्मा, चन्द्रधर (2003), पाश्चात्य दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास; दिल्ली।
- शर्मा, डॉ0 राममूर्ति, (1963), अद्वैत वेदान्त (इतिहास तथा सिद्धान्त), ईस्टर्न बुक लिंक्स; दिल्ली।
- श्रीमती, रीस डेविडस (1934) : बुद्धिज्म।
- श्रीमती, रोस डेविडस (1931) : शाक्य और बुद्धिस्ट ओरिजिन्स।
- श्रीवास्तव, श्रीनारायण (1981) भारत में बौद्ध निकायों का इतिहास : किशोर विद्या निकेलन, भदैनी : वाराणसी।
- सिन्हा, प्रसाद, (2002), भारतीय दर्शन की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास; दिल्ली।
- सर्वपल्ली, डॉ0 राधाकृष्णन् (2017), भारतीय दर्शन, भाग–1 एवं 2, राजपाल एण्ड सन्स : दिल्ली।
- सांकृत्यायन, राहुल (1989), बौद्ध–दर्शन, किताब महल; इलाहाबाद सांकृत्यायन, राहुल (1930), बुद्धचर्य्या, गौतम बुक ट्रस्ट; दिल्ली
- हार्नर, आई0बी0 (1939) दी अर्ली बुद्धिस्ट थियरी आफ मेन प्रेडिक्टेड, ए स्टडी आफ दि अर्हत : लन्दन।
- हार्नर, आई0बी (1975) विमेन अण्डर प्रीमिटिव बुद्धिज्म (द्वितीय संस्करण) : लन्दन।
- हिरियन्ना, एम0, (1973), भारतीय दर्शन की रूपरेखा, राजकमल प्रकाशन; दिल्ली।